संस्थापक डॉक्टर हरीसिंह गौर
संक्षिप्त जीवन वृत्त

(जन्म : 26 नवम्बर 1870 || निधन : 25 दिसम्बर 1949)

बाल्यकाल : वंश

सागर (म.प्र.) के शनीचरी टौरी वार्ड में 26 नवम्बर 1870 को हरीसिंह गौर का जन्म हुआ था। इनके पितामह का नाम मानसिंह था पर रंग–रूप की वजह से लोग भूरासिंह कहते थे। ये अवध प्रांत सें गढपैरा आये, वहां से सागर में बसे और एक गांव में काश्तकारी करने लगे। इनका वर्ण क्षत्रिय, गोत्र भारद्वार और कुरी चंव्हर गौर थी। मानसिंह ने बुन्देला विद्रोह के समय मुगलों से लड़ाइयां लड़ी थीं और वृद्धावस्था में सैनिक वृत्ति त्याग काश्तकारी करने लगे थे। 84 वर्ष की आयु में 30 वर्ष के एक मात्र पुत्र तख्तसिंह को छोड़कर, अपनी सैनिक साज सज्जा के साथ शौर्यपूर्ण वातावरण में वे देवगति को प्राप्त हुए।

हरीसिंह का बचपन का राशि का नाम हर प्रसाद सिंह गौर था पिता पुलिस की नौकरी छोड़ बड़े भाई आधार सिंह के साथ जबलपुर में रहने लगे, अतः मां की छत्रछाया में हरीसिंह की प्रायमरी शिक्षा सागर में ही हुई। प्राइवेट पाठशाला में दो साल पढ़ने के उपरान्त कटरा की हिन्दी शाला में तीन साल अध्ययन किया जहां से जिला स्कूल (वर्तमान म्युनिसिपल हाई स्कूल) में भर्ती हुये। कुशाग्र तीवृ बुद्धि के कारण वे शीघ्र ही शिक्षकों के प्रिय बन गये। इनके शिक्षक कहते थे कि यह लड़का आग का तिलगा है, एक दिन खूब चमकेगा। हरीसिंह को तो प्रसन्नता थी पर सहपाठी तिलगा कहकर चिढ़ाने लगे।

प्रायमरी के पश्चात आठवीं तक की पढ़ाई इन्होंने दो वर्ष में ही समाप्त की और स्कूल के 'प्राइज ब्वॉय' कहलाने लगे। सरकार ने 2 रू. मासिक छात्र वृत्ति स्वीकार की। मिडिल परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की और सरकारी छात्रवृत्ति पर शासकीय हाई स्कूल जबलपुर गये। मेट्रिक की परीक्षा में फेल हो गये, इसका बड़ा ही दिलचस्प कारण उन्होंने अपनी जीवनी में लिखा है – सागर का एक छात्र अपनी मां के साथ रहकर जबलपुर में पढ़ता था उससे घनिष्ठता बढ़ी और ये उसके यहां खाना खाने लगे और बाद में साथ रहने लगे। एक रात इनकी सोने की अंगूठी इनके साथी की मां ने निकाल ली।

इन्होंने पुलिस मे रिपोर्ट की, मुकद्दमा चला और इन्हें अदालत में गवाही देने के लिये सम्मन मिला। ये परेशान रहने लगे और गवाही देने के बाद भी कई दिन तक इनका दिमाग परेशान रहा, जिसकी वजह से ये मेट्रिक की परीक्षा में फैल हो गये। छात्रवृत्ति बंद हो गई, जिससे इन्हें सागर वापस आना पड़ा। सागर में नौकरी की तलाश में 2 साल तक भटकते रहे। अंत में लोक कर्म विभाग के इन्जीनियर ने इन्हें 10 रू. मासिक और इनके मेट्रिक पास साथी को 20 रू. मासिक तनख्वाह पर कुलियों के ऊपर मेटगिरी के लिये कहा, पर इन्होंने समान तनख्वाह देने के लिये आग्रह किया। इनके साथी ने तो नौकरी कर ली पर ये पक्षपात पूर्ण रवैये से नौकरी करने को तैयार नही हुये। कुछ समय पश्चात 20 रू. माहवार तनख्वाह पर मेस क्लर्क की नौकरी मिली एक माह तक प्रतिदिन सुबह से अर्द्धरात्रि तक इन्हें कार्य करना पड़ा जिसकी वजह से ये बीमार पड़ गये और उस नौकरी से हाथ धोना पड़ा। घर का खर्च कठिनता से चलते देख जेब की कुल जमा पूंजी 10 रू. लेकर रोजी रोटी कमाने के ध्येय से ये घर से निकल पड़े। इनके भाई उस समय ज्यूडिशियल कमिश्नर कोर्ट, नागपुर में डिप्टी रजिस्ट्रार थे। हरीसिंह उनके पास पहुंचे और कोई कार्य करने की इच्छा व्यक्त की। भाई ने पहले मेट्रिक पास करने को प्रोत्साहित किया। ये मेट्रिक की परीक्षा में बैठे और न केवल प्रथम श्रेणी में बल्कि प्रान्त भर में सर्वश्रेष्ठ रहे। इन्हें 50 रू. नगद इनाम एक चांदी की घड़ी तथा 20 रू. की छात्रवृत्ति दी गई। गणित इनका प्रिय विषय था, जिसके लिये एक विशेष उपहार मिला। आगे की शिक्षा के लिये ये फ्री चर्च इन्सटिट्यूशन में (जो अब हिसलप कालेज के नाम से प्रसिद्ध है) भर्ती हुये।

हरीसिंह के भविष्य के प्रगतिशील शैक्षणिक जीवन की नींव इसी कालेज में पड़ी। अंग्रेजी और इतिहास में ऑनर्स करने वाले ये एकमात्र छात्र थे जिससे प्राध्यापकों से घनिष्ट सम्पर्क बढ़ा। इसके फलस्वरूप शिक्षाविद् मेकाले के ग्रथों को पढ़ने की ओर इनकी रुचि बढ़ी।

इनके भाई आधारसिंह ने अपने पुत्र मुरली मनोहर सिंह की देखरेख एवं बैरिस्ट्री की शिक्षा के लिए इन्हें केम्ब्रिज भेजा। बाल्यावस्था में अर्थाभाव की परिस्थितियों ने इन्हें अनुभवी एवं लगनशील छात्र बना दिया था और समस्त परीक्षाओं को कम से कम समय में विशेष योग्यता के साथ उत्तीर्ण होने की आवश्यकता को इन्होंने अपने जीवन में उतार लिया था। भाई से एक निर्धारित रकम उन्हें प्राप्त होती थी। अतः इन्होनें डॉउनिंग कालेज, केम्ब्रिज, में छात्रवृत्तियों हेतु आयोजित प्रतियोगिताओं में भाग लेना शुरू किया। गणित प्रतियोगिता मे भाग लेने के पश्चात इनके अलावा सभी विद्यार्थियों एवं प्राध्यापकों को पूर्ण आशा थी कि हरीसिंह प्रथम आवेंगे। पर इस प्रतियोगिता का परिणाम घोषित नहीं किया गया और छात्रवृत्ति स्थगित की तख्ती टांग दी गई। उस समय हरीसिंह गौर को इसका कारण ज्ञात न हो सका। काफी वर्षो बाद जब वे एल.एल.डी की उपाधि के बाद एक भोज में शामिल हुए तब उन्हें बताया गया कि छात्रवृत्ति, विदेशियों विशेषकर अश्वेत व्यक्तियों को वितरित नहीं की जाती थी। चूंकि हरीसिंह प्रतियोगिता में प्रथम आये थे, इसलिए छात्रवृत्ति किसी को नहीं दी गई। दूसरी प्रतियोगिता 'कुलपति पुरस्कार' के लिए अंग्रेजी कविता में उत्साहपूर्वक भाग लिया। स्टेपिंग वेस्टवर्ड कविता प्रतियोगिता में भेजी। विश्वस्त सूत्रों से इन्हें ज्ञात हुआ कि यद्यपि समस्त कविताओं में इनकी कविता सर्वश्रेष्ठ थी किन्तु निर्णायक अपनी मत घोषणा बिना किये ही चले गये और पुनः सूचना पट पर पहले जैसी घोषणा पढ़ने को मिली।

हरीसिंह के केम्ब्रिज जीवन में उनकी साहित्यिक प्रतिभा मुखरित हुई। उन्होंने अपनी प्रथम कविता उस समय के विख्यात महान साहित्यिक लार्ड टेनीसन को भेजी एवं उनसे साक्षात्कार किया। उन्होंने प्रोत्साहित करने के साथ ही पढ़ाई की ओर ध्यान देने और अभ्यास करते रहने को कहा। इन्होंने रचनायें प्रकाशित करवाना शुरू कीं। तत्कालीन साहित्यिक पत्रिकाओं में इनकी रचनाओं की प्रशंसा की गई एवं एक भारतीय के रूप में उनके अंग्रेजी ज्ञान को सराहा गया। उनका उत्साह छात्रवृत्ति अथवा प्रतियोगिता में प्रथम न आने के कारण कम नहीं हुआ वरन जब आक्सफोर्ड से एक संग्रह निकला तो केम्ब्रिज के छात्रों ने भी ऐसी योजना बनाई। फलस्वरूप गौर ने 'स्टेपिंग वेस्टवर्ड एण्ड अदर पोयम्स' पुस्तक प्रकाशित कराई जिससे साहित्यिक जगत में उन्हें प्रसिद्धि मिली और रायल सोसायटी ऑफ लिटरेचर का सदस्य चुना गया और यह लेखक गोष्ठी के सदस्य भी बन गए। वादविवाद में भाग लेने के कारण वे पहले ही छात्रों के विशेष प्रशंसापात्र बन गये थे। उन दिनों केम्ब्रिज तथा आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय इंग्लैण्ड के भावी कर्णधारों की निर्माण भूमि समझे जाते थे। प्रतिवर्ष दोनों विश्वविद्यालयो के छात्र संघो में पारस्परिक प्रतियोगितायें हुआ करती थीं जहां छात्रसंघ के माध्यम से छात्रों की प्रतिभायें सामने आती थीं। 1891 में आक्सफोर्ड के छात्रसंघ ने अपना एक छात्र प्रतिनिधि मण्डल केम्ब्रिज विश्वविद्यालय भेजा। चार अन्य छात्रों के साथ सार्वजनिक मंच पर प्रतियोगी के रूप में हरीसिंह गौर उनसे मिले। केम्ब्रिज रिव्यू में परिणाम प्रकाशित हुआ। श्री गौर समस्त वक्ताओं में प्रथम घोषित किये गये। आक्सफोर्ड के विशेष आमंत्रण पर केम्ब्रिज छात्रसंघ का प्रतिनिधित्व करने के लिये भी उन्हें ही चुना गया। आक्सफोर्ड रिव्यू में पुनः उन्हें प्रथम घोषित किया गया। यह इंग्लैण्ड में आम चुनाव का समय था। उदार दल की ओर से जान मॉर्ले का नगर में भाषण हुआ एवं नगर की ओर से धन्यवाद का प्रस्ताव करने के निमित्त श्री गौर चुने गये। उनका भाषण इतना ओजस्वी रहा कि लन्दन के समाचार पत्रों ने लिखा गौर जैसा वक्ता शासन कर्त्ताओं को एक उपहार है। 'द पाल माल' समाचार पत्र ने उन्हें अपना केम्ब्रिज सम्वाददाता नियुक्त किया। अन्य पत्रों ने भी उन्हें सहयोग के लिये आमंत्रित किया। अनेक स्थानों से भाषण देने के निवेदन पत्र आने लगे। श्री दादा भाई नौरोजी उस समय इंग्लैण्ड के राष्ट्रीय उदार दल में थे एवं उदार दल के सिंद्धात विषय पर श्री गौर का भाषण सुनकर काफी प्रभावित हुये थे। उन्हों ने श्री गौर को अपने साथी के रूप में चुनाव प्रचार के लिये आमंत्रित किया। दादा भाई नौरोजी सेंट्रल फाइल्सवरी क्षेत्र से उम्मीदवार थे। श्री गौर उस समय एक अच्छे लेखक और कुशल वक्ता माने जाने लगे थे। फलस्वरूप उदार वादी दल ने एक चुनाव क्षेत्र से उन्हें भी अपना उम्मीदवार घोषित कर दिया। अल्पवय होने के कारण वे चुनाव न लड़ सके पर श्री दादाभाई नौरोजी को विजयी बनाने के लिये उन्होंने काफी प्रयत्न किया। इस चुनाव प्रचार में लगे रहने के कारण उन्हें केम्ब्रिज से काफी समय अनुपस्थित रहना पड़ा। परीक्षा निकट थी, मेट्रीकुलेशन के बाद तीन वर्ष का पाठ्यक्रम पढ़ने को था। वैसे परीक्षा दृष्टि से श्री गौर ने आवश्यक अध्ययन कर लिया था फिर भी वे प्रथम आना आवश्यक समझते थे कि परम्परा न टूटे साथ ही डबल आनर्स करने की भी तीव्र इच्छा थी। केम्ब्रिज में बी.ए. उपाधि महत्वपूर्ण मानी जाती है। पी.एच.डी. तथा डी.फिल. प्राप्त करना ऑनर्स से सरल था। इनके ऑनर्स के विषय मनोविज्ञान, नीतिशास्त्र, कानून दर्शनशास्त्र तथा अर्थशास्त्र थे। इनके प्राध्यापक श्री हेनरी सिडगर्क और एलफ्रेड मार्शल इनकी अध्ययन शीलता से इतने प्रभावित हुए थे कि उन्होंने सम्मिलित रूप से कालेज सीनेट से सिफारिश की कि श्री गौर को बीच की शर्तें और पद्धतियां पूरी किये बिना ही परीक्षा में बैठने की अनुमति दी जानी चाहिये। सीनेट ने भी श्री गौर को परीक्षा में बैठने की विशेष

अनुमति दे दी। 1891 में उन्होंने दर्शन और अर्थ शास्त्र में ऑनर्स की उपाधि ली ओर 1892 में कानून की उपाधि अर्जित की। बाद में 1905 में डी. लिट. की पहली डिग्री लंदन विश्वविद्यालय से और फिर ट्रिनिटी कालेज डब्लिन से प्राप्त की। केम्ब्रिज के वातावरण में श्री गौर की साहित्यक प्रतिभा तत्कालीन कवियों और लेखकों के सम्पर्क में आने से और बढ़ी। लार्ड टेनीसन से साक्षात्कार के उपरान्त उन्होंने अपने छात्र जीवन में नई साहित्यक चेतना जागृत करने एवं वातावरण बनाये रखने के ध्येय से साहित्यिक अध्ययन क्लब की स्थापना की जिसका नाम 'मरमेड क्लब' रखा। इसकी गोष्ठियों में उस समय के बहुत से प्रसिद्ध लेखक तथा कवि आमंत्रित किये जाते थे। आगे चलकर यह क्लब काफी विख्यात हुआ और इसके अनेक सदस्य साहित्यकार बने। श्री गौर द्वारा लिखा गया एक नाटक लंदन की नाट्य शाला में खेला गया था। इसने दर्शकों को पर्याप्त रूप से आकर्षित किया। विविध कार्यक्रमों की व्यवस्था के कारण श्री गौर इच्छा रहने पर भी कभी खेल–कूद तथा अन्य ऐसी ही प्रतियोगिताओं में भाग न ले सके। 1892 में बैरिस्टरी का प्रमाण पत्र लेने के बाद वे भारत लौट आये।

प्रशासकीय नौकरी

अपने बड़े भाई श्री आधारसिंह से होशंगाबाद से मिलकर वे सीधे जबलपुर में सेन्ट्रल प्राविंस के चीफ कमिश्नर श्री एन्टोनी मेकडॉनल से मिले जिन्होंने केम्ब्रिज के तीन साल के सभी कार्यों के प्रमाणपत्र एवं साहित्यक प्रतिभा और शैक्षणिक उपधियों से प्रभावित होकर एक ई.ए.सी. को लम्बे अवकाश की छुट्टी देकर श्री गौर को भंडारा में ई.ए.सी. नियुक्त किया। पहले स्थानीय न्यायालय और राजस्व अधिकारी का पद एवं कार्य उन्हें सौंपा गया। उस समय लगभग 300 उलझे मुकद्दमें इनके सामने थे, जिन्हें उन्होंने एक वर्ष के भीतर ही निबटा दिया। उनकी कार्यप्रणाली और कानूनी योग्यता की सराहना शासकीय प्रतिवेदन में की गई और ये योग्य तथा कुशल प्रशासक के रूप में प्रसिद्ध हुए। हत्या के अभियोग में बन्द चार अभियुक्तों तक, जो सेशन अदालत में मुकदमें की सुनवाई की तारीख का इंतजार कर रहे थे, इनकी प्रसिद्धि पहुंची। उन्होंने अपनी मां को दो हजार रूपये लेकर गौर के पास भेजा। गौर बड़ी दुविधा में पड़े। एक ओर मुश्किल से मिली सरकारी नौकरी, दूसरी ओर दो हजार रुपये नगद और वह केस जीतने पर इतनी ही रकम मिलने का आश्वासन। मुकदमें की फाइल देखने पर उसमें इन्हें अभियुक्तों के बचने की आशा दिखलाई दी। उस समय इन पर कर्ज भी था जो अपनी 229 रू. प्रति माह की तनख्वाह से चुकाने में असमर्थ थे। भविष्य में वकालत से काफी धन कमाने की महत्वाकांक्षा ने उन्हें सरकारी नौकरी से इस्तीफा दे देने को मजबूर कर दिया और चीफ कमिश्नर की रुष्टता के बावजूद भी उन्होंने नौकरी छोड़ दी। यह उनका पहला मुकदमा था जिसमें केस एक सप्ताह तक चला और सभी मुलजितों को सजा हो गई परंतु अपील में सभी मुजजिम बरी हुये। इस सफलता ने धन और उत्साह दोनों की ही वृद्धि की।

अभिवक्ता एवं विधिवेत्ता

अपूर्व बुद्धि के धनी श्री हरीसिंह गौर ने रायपुर, नागपुर, कलकत्ता, लाहौर, रंगून आदि नगरों में वकालत की। द्वितीय विश्व युद्ध के समय उन्होंने 4 साल इंगलैंड की प्रीवी कौंसिल में भी वकालत की। मध्य प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री स्वर्गीय पं. रविशंकर शुक्ल इनके समकालीन थे और रायपुर में वकालत करते थे। श्री गौर ने रायपुर के पश्चात नागपुर को अपना निवास स्थान बनाया। उनके केस प्रस्तुत करने का ढंग ओजस्वी, अनोखा एवं दिलचस्प होता था, जब वे विरोध करते तो विरोध भयंकर होता था, जब बचाव पक्ष की ओर होते तो प्रत्येक सम्भव उपाय करते। इससे कभी–कभी न्यायाधीश उनसे चिढ़ जाते थे। रायपुर के एक जमींदार का दीवानी मुकदमा प्रस्तुत करने के लिये इन्होंने संबंधित विषय का इतना गहन अध्ययन किया कि 1902 में लॉ ऑफ ट्रान्सफर ऑफ प्रापर्टी एक्ट' नामक पुस्तक प्रकाशित की जिससे कानून के पंडित एवं लेखक के रूप में उनका नाम लिया जाने लगा। 1909 में उनकी भारतीय दंड संहिता की तुलनात्मक विवेचना पुस्तक प्रकाशित हुई जो 3,000 पृष्ठों के दो भागों में विभाजित थी। अंग्रेजी भाषा में इस विषय पर इतने विविध तुलनात्मक दृष्टिकोण से लिखी गई यह सर्वप्रथम पुस्तक आज भी प्रमाणिक मानी जाती है। नवयुवक वकील इस पुस्तक को खरीदकर ही वकालत शुरू करते हैं। 1919 में उन्होंने हिन्दू लॉ पर पुस्तक प्रकाशित की। डॉ.गौर ने हिन्दू–कानून का गहन अध्ययन किया। अपने अध्ययन के अल्प ज्ञान के सहारे ही उन्होंने अनेक शास्त्रीय ग्रन्थों का अध्ययन किया और अनुवाद पढ़े। तीन वर्षो के सतत अध्यवसाय और प्रयत्नों के बाद उन्होंने अपनी पुस्तक का प्रथम प्रारूप निर्मित किया और उसे पुनः कई बार संशोधित किया। स्वयं संतुष्ट हो जाने पर ही उन्होंने उसकी कमेन्ट्री लिखने का प्रयास शुरू किया। वे चाहते थे कि उनकी पुस्तक छात्र, वकील और न्यायाधीनश, प्रत्येक के दृष्टिकोण से उपयोगी एवं परिपूर्ण रहे। इसी को ध्यान में रख उन्होंने इससे संबंधित विषय 1,500 पुस्तकों का और 7,000 केसों का अध्ययन किया भारतीय विधि–शास्त्रों में यह पुस्तक अप्रतिम कही जा सकती है।

साहित्यकार

साहित्यकार के रूप में भी डॉ. गौर की उपलब्धि कम नहीं है। उनके साहित्य कर्म की अनेक दिशाएं हैं। उपन्यास, काव्य, आत्मकथा निबन्ध–साहित्य के कई विभिन्न क्षेत्र उनकी लेखनी और प्रतिभा से भास्वर हुए है। डॉ. गौर ने तीन उपन्यास लिखे हैं जिनमें एक उपन्यास 'हिज ओनली लव' विशिष्ट है। उनकी एक अन्य महत्वपूर्ण पुस्तक 'स्प्रिट ऑफ बुद्धिज़्म' है जो बौद्ध दर्शन का गंभीर एवं तात्विक अध्ययन प्रस्तुत करती है। बौद्ध धर्म को मानने वाले देशों में इस पुस्तक को बड़ी मान्यता मिली है। जापान सरकार के आमंत्रण पर जब डॉ. गौर वहां गए थे तो वहां के धर्म गुरु के रूप में ही उनका सम्मान हुआ। इसके पश्चात उन्हें अन्य एशियाई एवं पूर्वी देशों में भ्रमण करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

विस्तृत भ्रमण, गहन अध्ययन और मनन के फलस्वरूप डॉ. गौर ने अनेक लेख और निबंध लिखे जो फेक्ट एण्ड फेन्सीज़ (बीइंग स्टडीज़ इन पॉप्युलर प्रोबलम्स्) नामक पुस्तक में संकलित है। ये लेख उनके जीवन–दर्शन, वैज्ञानिक मान्यताओं एवं प्रगतिशील विचारों को प्रगट करते हैं। इनमें से अधिकांश लेख रूढिग्रस्त विचारधाराओं धार्मिक अन्धविश्वासों तथा अज्ञान के विरोध में वैज्ञानिक तर्क के रूप में प्रस्तुत हुए है। उनका साहित्य सौष्टव उन्हें स्थायी

महत्व प्रदान करता है। डॉ. गौर की कविता की एक अन्य पुस्तक 'रेण्डम राइम्स' है जिसमें इनकी नई और पुरानी कविताओं का संग्रह है। इन रचनाओं से इनके प्रकृति प्रेम, राष्ट्रवादी दृष्टिकोण एवं अंग्रेजी भाषा पर प्रभुत्व का ज्ञान होता है। डॉ. गौर की अंतिम रचना उनकी आत्म कथा है जिसे उन्होंने सन 1942 में लिखना प्रारम्भ किया। 23 जनवरी 1944 तक का जीवन विवरण इस में आ गया है।

राजनीतिज्ञ

डॉ. हरीसिंह गौर ने इम्पीरियल कौंसिल की सीट के लिए दो बार चुनाव लड़ा पर असफल रहे। 1919 में कौंसिल के स्थान पर विधान परिषद की रचना हुई। विधान परिषद की सदस्यता के लिए तीसरी बार अपने एकमात्र प्रतिद्वन्दी के नामांकन पत्र में गलती निकाल उसे खारिज करवा के विधान परिषद में निर्वाचित हुए। परिषद में सन् 1920 से लेकर 1935 तक सदस्य रहे। यहां उनका व्यक्तित्व विधि निर्माता के रूप में प्रगट हुआ एवं समाज–सुधार संबंधी उनके विचार मुखरित हुए। उन्होंने कई बिल परिषद में पेश किये जो कानून बने। नागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में मतभेद होने से उन्होंने कांग्रेस दल की सदस्यता छोड़ दी। व्यक्तिगत रूप से उनका परिषद में काफी प्रभाव था और वे विरोधी दल के नेता समझे जाते थे। विरोधी दल का नाम 'डेमोक्रेटिक' दल रखा गया था। आज यह मत है कि सन् 1921 की गठित परिषद का कार्यकाल प्रमुख रूप से इस दल की सफलता का इतिहास है। उस समय तक भारत में स्टाम्प और टिकिट इंग्लैण्ड से छपकर आते थे। उन्होंने एक योजना बनाकर परिषद में पेश की। फलस्वरूप नासिक में एक फैक्ट्री बनाई गई जिसमें समस्त स्टाम्प और टिकिट छापे जाने लगे। सन् 1923 के अधिनियम 30 का प्रारूप बनाकर उसे पास करवाया जिसके अनुसार हिन्दू, सिख जैन, बौद्ध संप्रदायों में अन्तर्जातीय विवाह सम्भव हो सका और ऐसे विवाहितों का पैतृक संपत्ति में अधिकार सुरक्षित रखने का प्रावधान बना। दक्षिण भारत में देवदासी प्रथा थी जिसके अनुसार कम उम्र की लड़कियां मंदिर में आजन्म सेवा के लिये भेजी जाती थीं एवं धार्मिक क्षेत्र में इसकी बड़ी मान्यता थी। इस प्रथा के कारण गम्भीर गम्भीर सामाजिक दुर्गुण बढ़ रहे थे। श्री हरीसिंह गौर ने प्रस्ताव रखा एवं प्रथा पर रोक लगवाई, फलस्वरूप मंदिर में देवदासी के लिए कम उम्र की लडकियों को लेना भारतीय दण्ड संहिता की धारा 372 एवं 373 के अंतर्गत अवैध एवं दण्डनीय माना गया। इन्होंने हिन्दी समाज की विभिन्न संस्थाओ को सुव्यवस्थित करने के उद्देश्य से एक बिल 'हिन्दु रिलीजियस एण्ड चेरिटेबिल ट्रस्ट' स्वीकृत कराया। भारतीय महिलाओंको वकालत करने का अधिकार देने का प्रस्ताव भी उनके प्रयासों से पारित हुआ। 'चिल्ड्रन प्रोटेक्शन एक्ट' भी इन्हीं के द्वारा कानून बना। सन् 1946 को भारतीय संविधान सभा का गठन हुआ इसके श्री डॉ. गौर एक प्रमुख सदस्य थे। भारतीय संविधान के निर्माण में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। रायपुर जिला परिषद के वे दस साल तक सचिव रहे। इसी कार्यकाल में प्रकृति प्रेमी गौर के प्रयत्नों से वहां एक वृहत जन–उद्यान बनवाया गया था। नागपुर नगर पालिका के अध्यक्ष पद को भी आपने सुशोभित किया एवं नगर को सुन्दर तथा स्वच्छ बनाने के लिये आपने अनेक प्रशंसनीय कार्य किये।

शिक्षाविद्

सन् 1921 में केन्द्रीय सरकार ने दिल्ली में विश्वविद्यालय की स्थापना हुई एवं डॉ. हरीसिंह गौर प्रथम कुलपति नियुक्त हुए और 1924 तक इस पद पर आसीन रहे। इस विश्वविद्यालय की प्रारंभिक प्रगति का इतिहास डॉ. गौर की शैक्षणिक प्रतिभा एवम् प्रशासनिक अनुभव बतलाता है। इसके पश्चात डॉ. हरीसिंह गौर नागपुर विश्वविद्यालय में दो बार सन 1928 और 1936 में कुलपति पद पर नियुक्त हुए एवं इंग्लैण्ड में ब्रिटिश साम्राज्य के अंतर्गत 27 विश्वविद्यालयों का 25 दिवसीय सम्मेलन भी डॉ. गौर की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति पर इंग्लैण्ड से भारत आने पर डॉ. गौर ने सागर के प्रमुख नागरिकों से संपर्क किया और सागर में विश्वविद्यालय की स्थापना की रूपरेखा उनके सम्मुख प्रस्तुति की। मध्य प्रदेश सरकार के विश्वविद्यालय को जबलपुर में स्थापित करने क सुझाव को ठुकरा कर डॉ. गौर ने बिना किसी शासकीय सहायता के जुलाई 1946 में सागर विश्वविद्यालय का कार्यारम्भ करवाया और डॉ. हरीसिंह गौर सागर विश्वविद्यालय के संस्थापक कुलपति बने। 25 नवम्बर 1946 को प्रान्तीय शासन ने सागर विश्वविद्यालय अधिनियम पारित किया।

सागर

डॉ. गौर की बाल्यावस्था के कुछ वर्ष, मेट्रीकुलेशन के एक दो वर्ष एवं सन् 1945–46 के बाद का अंतिम समय सागर में बीता। इस नगर के विकास एवं समृद्धि के लिये उनके मस्तिष्क में बहुत सी योजनाएँ थी जैसे– अच्छा स्टेशन, हवाई मार्ग अड्डा, विश्वविद्यालय, तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था, राजधानी बनाने पर विचार, जल योजना आदि। कुछ को तो वे अपने जीवनकाल में ही पूरी कर गये। विश्वविद्यालय का कार्य मकरोनिया स्थित मिलिटरी की पुरानी बैरकों में शुरू किया। अपने इस नगर को विश्वविद्यालय के लिये चुनने के सम्बन्ध में वे कहा करते कि केम्ब्रिज और आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयों के समान ज्ञान केन्द्र राजसत्ता से दूरी ही होना चाहिये। उन्होंने 20 लाख की धनराशि से हमारे प्रान्त में इस प्रथम विश्वविद्यालय को शुरू किया एवं अपनी वसीयत द्वारा अपनी सम्पत्ति का 2/3 जो लगभग दों करोड़ था इसके लिये दान किया।

राष्ट्रकवि स्व. मैथिलीशरण गुप्त ने ऐसे शिक्षाविद् और दानवीर के लिये ठीक ही कहा है –

सरस्वती–लक्ष्मी दोनों ने दिया तुम्हें सादर जय–पत्र,
साक्षी है हरीसिंह ! तुम्हारा ज्ञानदान का अक्षय सत्र!